

# PHILOSOPHY

HONS., Paper-I (Part I)

## Evolution (Samkhya)

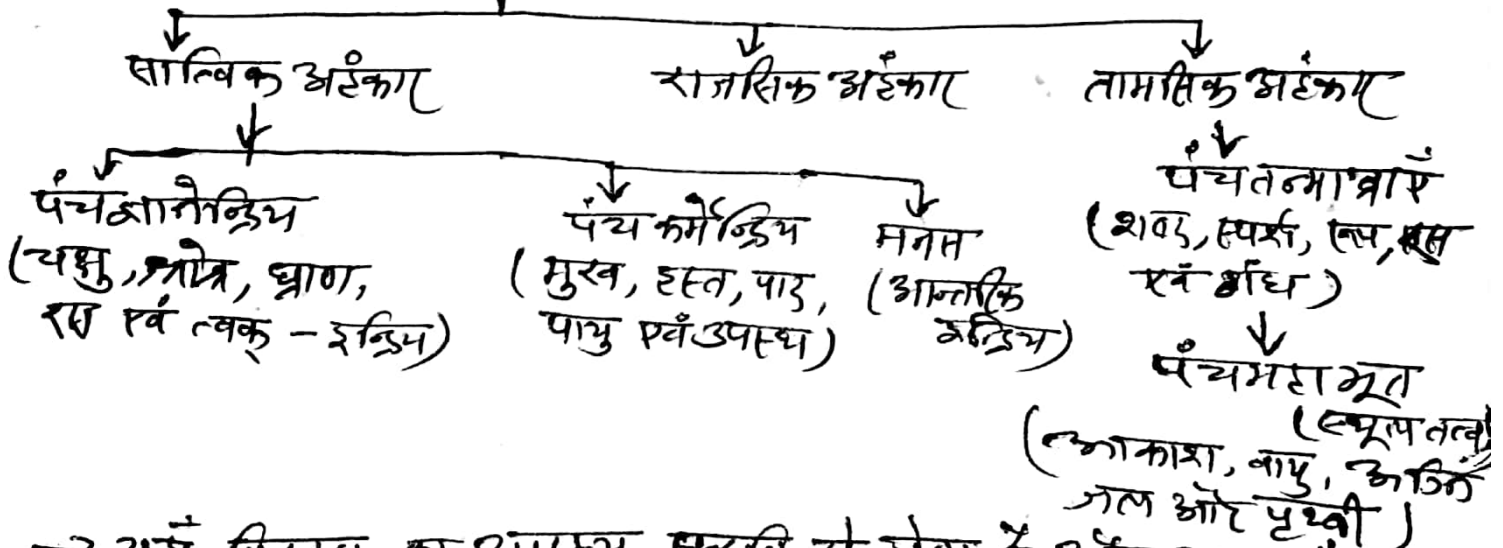
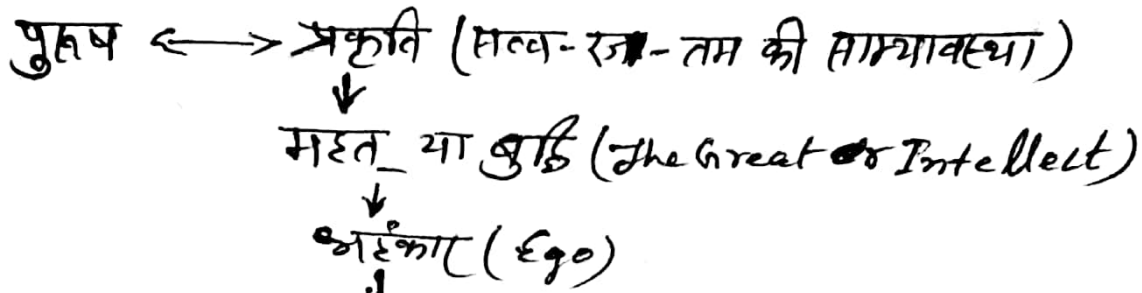
सांख्य का विकासवाद

Dr. S. K. Singh  
Mob. - 9431449951

- प्रकृति से जगत का विकास मानने के कारण सांख्य दर्शन के जगत संबंधी सिद्धान्त को विकासवाद का सिद्धान्त कहा जाता है।
- ⇒ सांख्य दर्शन निरीश्वरवादी होने के कारण सृष्टिवाद को स्वीकार न कर विकासवाद को स्वीकार करता है। वह प्रकृति (पृथ्वी मूल उपादान कारण के आधार पर अपनी सत्कार्यवादी अवधारणा के अंतर्गत जगत के विकास की व्याख्या करता है।
- जब पुरुष का अविप्रकृति से सान्निध्य होता है तो उसके परिणामस्वरूप प्रकृति के गुणों की साम्प्रदायिकता में विकार उत्पन्न होता जाता है। इस गुण-क्षोभ के कारण विरूप परिणाम की स्थिति में प्रत्येक गुण दूसरे गुणों पर आधिपत्य जमाना चाहता है और अशुभानुपातों में उनके संयोगों के कालस्वरूप नाना प्रकार के सांसारिक विषय उत्पन्न होते हैं। अतः विकास
- सांख्य मतानुसार प्रकृति से जगत का विकास यांत्रिक न अंकुर प्रयोजनपूर्ण है। सांख्य के मतानुसार प्रकृति दर्शनार्थ (ज्ञात होने के लिये) पुरुष की अपेक्षा रखती है और पुरुष केवलचार्थ (केवलच की प्राप्ति के लिये) प्रकृति की सहायता लेता है। सर्ज या विकास पुरुष के भोग एवं अपवर्ण रूपी प्रयोजन की सिद्धि के लिये होता है।
- भोग के लिये पुरुष को प्रकृति से आविर्भावित जगत की आवश्यकता होती है, किन्तु मोक्ष (अपवर्ण) के लिये भी पुरुष को प्रकृति की आवश्यकता होती है अपेक्षा होती है क्योंकि सांख्य मतानुसार मोक्ष हेतु पुरुष का प्रकृति से गेद का ज्ञान या विवेक ज्ञान आवश्यक है। जब पुरुष अपना और प्रकृति के गेद को समझकर अपने चार्थ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त करता है तो फिर मोक्ष (अपवर्ण) की प्राप्ति हो जाती है।
- "उंकि प्रकृति अचेतन है और अचेतन होते हुए वह पुरुष के भोग एवं अपवर्ण रूपी प्रयोजन की सिद्धि के लिये कार्यरत है। अतः

अचेतनता एवं प्रयोजनात्मकता को मानने में कोई खीथाकास नहीं है क्योंकि सौंल्य जिस प्रकार बछुड़े की उपस्थिति मात्र से शाय के शरीर के भीतर दुग्ध-प्रवाह की प्रक्रिया का उत्पन्न होता है अचेतन है किन्तु उत्पन्न प्रयोजन बछुड़े की दुग्ध-पूर्ति कारण है उसी प्रकार अचेतन प्रकृति भी पुस्तक के प्रयोजन सिद्धि के हेतु प्रेरित होती है।

प्रकृति से होनेवाले विकास-क्रम की निम्नलिखित तार्किक है-



→ यहाँ विकास का आरम्भ प्रकृति से होता है और अन्तःपंचमहाभूतों में होता है। इस प्रकार सौंल्य विकासवाद सूक्ष्म से आरम्भ होकर स्थूल की ओर बढ़ता है। यह विकास एक सम्भवतः न होकर चरम होता है। जगत का आविर्भाव प्रकृति से होता है तथा कात्यायन में वे जागतिक वस्तुएँ प्रकृति में ही विहित हो जाती हैं।

→ सौंल्य का विकासवाद डार्विन के विकासवाद से मिलता है। सौंल्य का विकासवाद विश्व के विकास की व्याख्या करता है जबकि डार्विन का विकासवाद अविदीप्त विकास की व्याख्या करता है। सौंल्य का विकास प्रयोजनात्मक है जबकि डार्विन का विकास भांजिक। सौंल्य में पुस्तक व प्रकृति के सामीप्य से विकास की प्रक्रिया प्रारंभ होती है जबकि डार्विन के अनुसार पुस्तक (जगत्) पराधीन के सन्निधि होने के बाद विकास प्रारंभ होता है। सौंल्य के अनुसार कर्म विकास का प्रारंभ है जबकि डार्विन के अनुसार विकास के लिए प्रयत्न